International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 902-904

ग्लोबल और अंचल के बीच निर्मित संबंधों की दास्तान – 'प्रतियोगी'

किशन सिंह यादव
हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

90 के दौर में इस देश में एक बडी शुरूआत की गयी और कहा गया कि इससे देश की अर्थव्यवस्था सुधरेगी जिससे हर क्षेत्र को लाभ होगा। यह शुरूआत उदारीकरण की नीतियों को लागू कर के की गई और यह तर्क दिया गया कि अब दुनिया एक गांव की तरह है जहाँ व्यापार पर कोई प्रतिबंध ठीक नहीं है। कोई कंपनी अपने माल को खरीद–बेच सकती है। इससे अन्य क्षेत्रों पर तो प्रभाव पड़ा ही लेकिन सबसे बड़ा प्रभाव यहाँ की बाजार पर पड़ा। जिसका असर महानगर से गांव की नजदीक की छोटी बाजार तक पर दिखाई देता है। ऐसी ही एक छोटी सी बाजार में परिवर्तन की प्रक्रिया क्या रही थी या बदलाव कैसे हो रहे थे। इसका वर्णन नीलाक्षी सिंह की कहानी 'प्रतियोगी' में है।

इस कहानी में हम देखते सकते हैं कि भूमण्डलीकरण के लागू होने के बाद भारत में क्या बदलाव हुए। कहानी भूमण्डलीकरण के पहले के बाजार, समाज तथा परिवार और बाद के बाजार, परिवार तथा समाज को चित्रित करती है। हम अंचल की एक बाजार का यह चित्र देख सकते हैं ''अलस्सुबह से ये जलेबी, कचरी और पिउजुआ मिलकर ऐसा समा बांधते कि चिल्लागंज चौमुहारी से बिना पैसा खर्च किए बचकर निकल जाना मुश्किल पड़ जाता। इन तीनों का अपने व्यवसाय में यहाँ एकाधिकार था और तीनों के तीनों प्रतियोगिताविहीन थे जो भी ग्राहक आता वह एक को खरीदकर बाकी दो की या दो को खरीदकर बेचारे एक की अनदेखी न कर पाता और ये तीनों मिलकर अहिंसा से लूट लेते।''[1]

आगे इस कहानी में कहानीकार ने उदारीकरण के बाद जो बाजार देश में बन रही थी और देश उपभोक्तावादी संस्कृति की चपेट में आ गया लगता था, इसका चित्रण किया है – ''एक सफेद दाढ़ी वाला बूढ़ा जादूगर था वह अपने सामने पड़ने वालों के मन को जिस्म से अलग कर देता और उनके मन को अपनी तलहथी पर धर लेता। तब उस पर सिर्फ तलहथी का वश रह जाता। मन उछलकर उधर ही गिरता, जिधर तलहथी उसे उछालकर गिराना चाहती थी। इस मायावी बूढ़े जादूगर का संसारी नाम था बाजार।''[2]

इसी बूढ़े के गिर्द भीड़ लगाने वालों में बाबू छक्कन प्रसाद भी एक हुए। उनका मन ही बूढ़े की गढ़बढ़ी तलहथी पर फुदक–फुदक उछलने लगा और वे सोचने लगे ... वो नहीं जो अब तक सोचा करते थे ... उससे अलग ... बहुत अलग कुछ ... सोच की प्रस्तावना इस मार्मिक बिन्दु से ... आरम्भ होती है कि मैं पैदा हुआ छक्कन प्रसाद बनकर ... जिये जा रहा हूँ। छक्कन प्रसाद बनकर ... क्या मरूँगा भी छक्कन प्रसाद बनकर ही? मेरी जरूरतों .... इच्छाओं को घेरा कभी बढ़ेगा नहीं क्या? बढ़ा भी तो क्या तब मैं अपनी आत्मा की चाह को तृप्त कर पाऊँगा।[3]

ये भूमण्डलीकरण के बाद के छक्कन प्रसाद का हाल ही नहीं है बल्कि तमाम भारतीयों की स्थिति छक्कन प्रसाद के माध्यम से हम देख सकते हैं। उनके सोच विचार बदल जाते हैं। ये जो नयी बाजार बन रही थी। उसका प्रभाव लोगों के सोच–विचार, रहन–सहन, जीवन प्रणाली यहां तक कि संस्कृति आदि पर भी पड़ रहा था। ''कहना न होगा कि बाजार व्यवस्था के आने और उसका वर्चस्व बढ़ने से आमजन के संगठन, दृष्टिकोण और जीवन मूल्य में भारी परिवर्तन आया।''[4]

नई बाजार व्यवस्था का प्रभाव इस कहानी में छक्कन प्रसाद के चरित्र पर पड़ा दिखाई देता है। यही छक्कन प्रसाद 90 के दशक के पहले एक चुनाव के परिणाम को लेकर एक व्यक्ति से शर्त लगाते हैं कि पंजा जीतेगा तो तुम्हें सिर मुंडाना पड़ेगा और अगर पंजा हारा तो मैं अपनी मूछ के एक तरफ का हिस्सा तो यथावत रहने दूँगा, दूसरी तरफ की मूँछ के ऊपर की ओर बढ़े हिस्से का सफाया कर दूँगा। चुनाव प्ररिणाम आए तो लेने के देने पड़े गए। छक्कन प्रसाद शर्त हार गए। लेकिन वे उसूल के तपे हुए थे और उन्होंने शर्त पूरी की। इस शर्त को वे आज तक निभाए जा रहे हैं। 'न सिर्फ तभी बल्कि आज तक वे उसी विचित्रता को लिए, सिर उठाकर जिए चले जा रहे थे।''[5]

ऐसे उसूल के पक्के छक्कन प्रसाद पर जब नई बाजार व्यवस्था आयी और उसका वर्चस्व बढ़ने लगा तो, उसका प्रभाव पड़े नहीं रहा और अब उनका सबका दिमागी दांव–पेच से था और उन्होंने पूराने मूल्यों को छोड़ इस नये मूल्य जो बाजार में सफल होने के लिए जरूरी थे उसे अपनाया। उन्होंने बड़ी सावधानी और कुशलता से 'बमशंकर भंडार' नामक कस्बे के तत्कालीन नम्बर वन मिष्ठान निर्माण गृह के एक चतुर कारीगर पर हाथ साफ कर लिया। दांत पर दांत बैठकर छक्कन प्रसाद, उस चतुर–कारीगर को अपनी मान्यता के अनुसार एक मोटी तनख्वाह महिनवारी देना तय कर बैठे।

जब उन्नीस सौ निन्नानवे का कैलेण्डर खुला, तब स्थिति ये बनी कि चिल्लागंज चौमुहानी से 'बमशंकर भण्डार' को, 'छक्कन प्रसाद एण्ड संस' नामक प्रतिष्ठान चुनौती देने लगा। इस तरह छक्कन प्रसाद की दुकान चल निकली और छक्कन प्रसाद के सत्तू की सोंधी कचौड़ियों, समोसों और मस्त लाल जामुन ने कस्बे भर में धूम मचा दी। अब इस बाजार की स्थिति एक दम उलट गयी। लोग छक्कन प्रसाद की दुकान पर उचियाने लगे और कस्बे भर की

---

1 नीलाक्षी सिंह – परिन्दे का इंतजार–सा कुछ, पृ. 12.
2 वही, पृ. 14.
3 वही, पृ. 14.
4 गिरीश मिश्र – बाजारः अतीत और वर्तमान, पृ. 53.
5 नीलाक्षी सिंह – परिन्दे का इंतजार–सा कुछ, पृ. 10.

मक्खियों ने दुलारी और मुस्मानित की कड़ाहियों पर धावा बोल दिया। अब पिअजुल, जलेबी, और कचरी को लोग नहीं पूछते थे यहां तक कि इन चीजों के नाम इतने घुर देहाती प्रतीत होने लगे थे कि जीभें उचारने में लजाती थीं।

अब समसामयिक समाज में दो विपरीत प्रवृत्तियाँ लक्षित हो रही है। एक ओर पृथ्वी की दूरियां सिकुड़ रही हैं और मानवजाति 'एक ग्रह एक मानवता' के आदर्श की ओर बढ़ती दिखाई दे रही है, वेशभूषा, खानपान, मनोरंजन आदि क्षेत्रों में परंपरागत सीमाएं टूट रही हैं और एक नया रूचि–वैविध्य लोकप्रिय होता जा रहा है, जो 'अपने' और 'पराये' के बारे में अधिक चिंतित नहीं है, कलाए इस पारस्परिक आदान–प्रदान से अछूती नहीं रही है, उनमें पर–संस्कृति प्रभाव व्यापक रूप से देखे जा सकते हैं। दूसरी ओर 'जड़ों की खोज' या 'बुनियाद की तलाश' का उपक्रम बड़े शक्तिशाली ढंग से उभरा है। यह प्रवृत्ति गहराई में जाकर संस्कृति की जड़ों को खोजने तक ही सीमित नहीं रही है, उसका आग्रह समूहों की विशिष्ट परंपराओं और सांस्कृतिक अस्मिता की वापसी की ओर भी है।[6]

दरअसल इस अर्थव्यवस्था ने लोगों में एक नयी उपभोक्ता संस्कृति को जन्म दिया है जिससे लोग विज्ञापन से प्रभावित हो विकसित देशों के खानपान, वेश–भूषा, मनोरंजन के साधन आदि पर आकर्षित हो रहे हैं। लेकिन कुछ लोग हैं जिन्हें यह संस्कृति पसंद नहीं आ रही है वह अपने मूल्यों से समझौता नहीं करना चाह रहे हैं। दुलारी ऐसी ही एक महिला है जो अपना पुराना जलेबी, कचरी का धंधा करना चाह रही है इसीलिए वह छक्कन प्रसाद के साथ नहीं जाती। साथ ही मुसमातिन जैसे अनपढ़ लोग भी थे जिनका मुँह जब बनिया हिसाब ठोंका पीटा था। लेकिन नये जमाने के हिसाब से खुद को ढाल नहीं पाई। मुसमातिन को बाजार छोड़कर पिछड़ी बाजार में जाना पड़ता है ऐसे मौके पर दुलारी मुसमातिन आपस में बात करती हैं तब दुलारी ने मुसमातिन से कहा कि हर तरह की लड़ाइयाँ एक ही मैदान में नहीं लड़ी जा सकती। पहली के सामने जीवन को बचाने का प्रश्न था, कभी ... दूसरी के सामने आत्मा को बचाने का सवाल था, अभी। दोनों उठ खड़ी हुई। रास्ते अलग थे। ऐसा होता ही रहता है कि बरसों का साथ जिस अपनापे का एहसास नहीं करता पाता, उसी पर दूरी अपनी उंगली घुसेड़कर आपको बेचैन कर देती है।

बाजारवाद के प्रभाव के कारण जो नयी परिस्थिति बनी थी उसमें प्रतिस्पर्धा एक नयी चीज थी इसके पहले धंधा करने वालों में एक सहयोग की भावना भी रहती थी। लेकिन नई परिस्थिति में दोनों का इस सत्य से एक साथ साक्षात्कार हुआ था कि नमक भी नामक का प्रतियोगी हो सकता था। वे दोनों ही पिअजुआ और कचरी जैसी दो नमकीन चीजें सालों से बेचती आयी थीं, लेकिन एक–दूसरे के कारण उनके धन्धे पर कभी आँच नहीं आयी। लेकिन 'छक्कन प्रसाद एण्ड सन्स' की नमकीन समोसा, कचौड़ी ने उनके सारे ग्राहक हड़प लिए थे।

बदली परिस्थिति में छक्कन प्रसाद बदले हुए सोच–विचार और मूल्य को ध्यान में रखकर दुकान में नयी चीज को लाते और नये युग में अपने कस्बे को कोई नया स्वाद देना चाहते थे। वे जानते थे कि पाकड़पुर सदर में एक ऐसे मध्यवर्ग का उदय हो चुका था जिसकी जितनी रूचि पैसा कमाने में थी उतनी ही, पैसे खरचने में भी थी। दूसरी तरफ दुलारी कभी दयनीय लगती, कभी मजबूत दिखती। वह जलेबी और कचरी को बेचना चाहती थी। बात सिर्फ जलेबी या कचरी की नहीं थी? बात एक पूरी परम्परा ... खुद दुलारी जैसों को उखाड़कर बहा दिये जाने की थी? सवाल सबको बचा लेने का था। नये के साथ–साथ क्या पुराने को भी संजोये नहीं रखा जा सकता है? ऐसे ही कुछ विचार दुलारी के मन में आ रहे थे कि एक दिन उसके बड़े बेटे ने मां से कहा – ''मां क्या तुम बाजार में इस तरह टिक पाओगी?'' – पहली बार बदले जमाने के इस नंगे, जेनुइन और आधुनिक किस्म के प्रश्न से उसका सबका पड़ा था। हे भगवान! और इतना बुद्धिगर सवाल उठाने वाला कौन ... उसी का बेटा! इतनी अकल ...!

इस तरह दुलारी की उलझन के बारे में उसके बेटे बात कर रहे थे। यह बातचीत के पल भावनात्मक स्तर पर ही नहीं विवेक के स्तर पर चल रही थी। बाजार में बने रहने और सफल होने के लिए दिमागी दावपेच लगातार जरूरी थी और भविष्य की संभावनाओं को पहचानने की क्षमता भी आवश्यक थी। दुलारी भी यह बात समझ चुकी थी और उसने बाजार के नये तौर तरीके से दुकान चलाने का निश्चय किया। इसलिए चौराहे पर एक नया दृश्य दिखा एक तरफ छक्कन प्रसाद के लिए वह शुभ दिन आया जब वह चाऊमीन, पेस्ट्री, सॉफ्ट ड्रिंक ... आइसक्रीम आदि नयी चीजों को छक्कन प्रसाद एण्ड सन्स–फास्ट फूड सेंटर में बेचने का मन बनाया।

चाऊमीन, पेस्ट्री, साफ्ट ड्रिंक्स .. आइसक्रम की बाजार में एण्ट्री ने रसगुल्ले, गुलाबजामुन, सिंघाड़े की पूछ कम कर दी। वहीं दूसरी तरफ इसी कस्बे का एक दृश्य और दुलारी की दुकान का था जहां सामान तो पुराने थे लेकिन तौर–तरीके नये अपना लिए गए थे। समय के बदलाव को पहचानते हुए बेचने के नए तरीके अपनाए गए जिससे इस दुकान का नजारा भी बदला हुआ दिख रहा था। अब लोग बायीं ओर वाले 'छक्कन प्रसाद एण्ड संस' की ओर बढ़े आते थे, पर एन वक्त मुड़ने के वक्त चौमुहानी की दाहिनी ओर का नजारा देखकर ठिठकते थे। दुलारी प्लास्टिक की जिस शेड के नीचे बैठी थी, उसके ऊपर वाले बैनर पर बड़े अक्षरों में लिखा था – 'दुलारी जलेबी सेन्टर'। और उसी पर नीचे लिखा था प्रति जलेबी मूल्य एक रूपया, पचास पैसे। चार जलेबियों की खरीद पर दो कचरी और एक कप चाय मुफ्त। यह बैनर पढ़कर लोग रूकते आखिर क्या चक्कर है। इस बैनर ने लोगों में एक खलबली मचा दी। वे जेब में हाथ डाले उधर बढ़े जाते थे ... क्या माजरा है भाई! सबसे हैरानी की बात तो ये थी कि लोग तो लोग, 'छक्कन प्रसाद एण्ड संस, फास्ट फूड सेन्टर' के मालिक छक्कन प्रसाद भी उधर ही बढ़े आते थे। इस तरह दुलारी की दुकान पर भी ग्राहक आने लगते हैं और रौनक बढ़ती जाती है।[7]

इस तरह हम कह सकते हैं कि उदारीकरण के कारण ग्लोबल के प्रभाव में अंचल के स्तर पर लोगों की सोच–विचार खानपान, संस्कृति आदि बहुत कुछ बदलता है। इसके बावजूद पुरानी चीजें भी उपलब्ध है। इस कहानी में छक्कन प्रसाद जहां ग्लोबल के प्रभाव में नये खानपान जीवन शैली को बढ़ा रहे हैं। वही दुलारी अंचल की पुरानी चीजों या कहे उसके माध्यम से एक पुरानी परंपरा को बचाने में लगी है जिसे सफलता मिलती दिखती है तो बदले समय और परिस्थिति के अनुसार खुद में बदलाव लाकर। कहानी में यह स्पष्ट संकेत है कि पुराने को नये के साथ संजोकर रखा जा सकता है। लेकिन बदले समय और परिस्थिति को समझते हुए उचित उपाय करके।

सन्दर्भ सूची

1. नीलाक्षी सिंह – परिन्दे का इंतजार–सा कुछ, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण–2006.

6 श्यामाचरण दुबे – समय और संस्कृति, पृ. 70.

7 नीलाक्षी सिंह, परिन्दे का इंतजार–सा कुछ, पृ. 25.

2. गिरीश मिश्र – बाजार : अतीत और वर्तमान, प्रकाशक – ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण 2011.
3. श्यामाचरण दुबे – समय और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2000.